



समकालीन स्त्री लेखन में ममता कालिया की प्रासंगिकता : विमर्श, दृष्टि और प्रभाव

पार्थवी राज, पद्म.डी रिसर्च स्कॉलर, डिपार्टमेंट ऑफ़ हिंदी, श्री जगदीशप्रसाद झाबरमल टिबरेवाल यूनिवर्सिटी, झुंझुनू, राजस्थान

सारांश

समकालीन हिन्दी साहित्य में ममता कालिया का विशिष्ट स्थान है। उन्होंने अपनी कहानियों, उपन्यासों, निबंधों तथा अन्य साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से स्त्री जीवन की जटिलताओं, सामाजिक असमानताओं, पारिवारिक संबंधों और बदलती सामाजिक परिस्थितियों को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया है। उनका लेखन स्त्री के अस्तित्व, अस्मिता, स्वतंत्रता, आत्मनिर्भरता और अधिकारों से जुड़े प्रश्नों को केंद्र में रखता है। ममता कालिया की रचनाओं में मध्यवर्गीय स्त्री का जीवन, उसकी आकांक्षाएँ, संघर्ष, मानसिक द्वंद्व तथा सामाजिक बंधनों के प्रति उसका प्रतिरोध प्रमुखता से दिखाई देता है। वे पितृसत्तात्मक व्यवस्था, लैंगिक भेदभाव और सामाजिक रूढ़ियों पर प्रश्न उठाते हुए स्त्री की स्वतंत्र पहचान और निर्णय लेने की क्षमता को महत्व देती हैं। उनकी साहित्यिक दृष्टि की विशेषता यह है कि वे स्त्री जीवन की समस्याओं को केवल भावनात्मक स्तर पर प्रस्तुत नहीं करतीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संदर्भों में उनका विश्लेषण भी करती हैं। उनकी भाषा सहज, व्यंग्यात्मक, संवादपरक और यथार्थपरक है, जिसके माध्यम से वे सामाजिक विसंगतियों को प्रभावी ढंग से उजागर करती हैं। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य समकालीन स्त्री लेखन के संदर्भ में ममता कालिया की साहित्यिक प्रासंगिकता का अध्ययन करना तथा उनकी रचनाओं में अभिव्यक्त स्त्री-विमर्श, वैचारिक दृष्टि और सामाजिक प्रभाव का विश्लेषण करना है। इसके अंतर्गत यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि उनका साहित्य स्त्री की बदलती सामाजिक स्थिति, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और लैंगिक समानता के प्रश्नों को किस प्रकार प्रस्तुत करता है। वर्तमान समय में जब स्त्री की पहचान, अधिकारों और समान अवसरों को लेकर विमर्श निरंतर विकसित हो रहा है, तब ममता कालिया का लेखन विशेष महत्व रखता है। इस प्रकार उनका साहित्य समकालीन स्त्री चेतना को अभिव्यक्त करने के साथ-साथ सामाजिक रूढ़ियों के पुनर्मूल्यांकन और समानतामूलक समाज की स्थापना के लिए वैचारिक आधार भी प्रदान करता है।